6 कुंती

0751CH06

यदुवंश के प्रसिद्ध राजा शूरसेन श्रीकृष्ण के पितामह थे। इनके पृथा नाम की कन्या थी। उसके रूप और गुणों की कीर्ति दूर-दूर तक फैली हुई थी। शूरसेन के फुफेरे भाई कुंतिभोज के कोई संतान न थी। शूरसेन ने कुंतिभोज को वचन दिया था कि उनकी जो पहली संतान होगी, उसे कुंतिभोज को गोद दे देंगे। उसी के अनुसार शूरसेन ने कुंतिभोज को पृथा गोद दे दी। कुंतिभोज के यहाँ आने पर पृथा का नाम कुंती पड़ गया।

कुंती के बचपन में ऋषि दुर्वासा एक बार कुंतिभोज के यहाँ पधारे। कुंती ने एक वर्ष तक बड़ी सावधानी व सहनशीलता के साथ उनकी सेवा-सुश्रूषा की। उसकी सेवा-टहल से दुर्वासा ऋषि प्रसन्न हुए और उसे उपदेश दिया और बोले–"कुंतिभोज-कन्ये, तुम किसी भी देवता का ध्यान करोगी, तो वह अपने ही समान एक तेजस्वी पुत्र तुम्हें प्रदान करेगा।"

इस प्रकार सूर्य के संयोग से कुमारी कुंती ने सूर्य के समान तेजस्वी एवं सुंदर बालक को जन्म दिया। जन्मजात कवच और कुंडलों से शोभित वही बालक आगे चलकर शस्त्रधारियों में श्रेष्ठ कर्ण के नाम से विख्यात हुआ। लेकिन अब कुंती को लोक-निंदा का डर हुआ। उसने बच्चे को छोड़ देना ही उचित समझा। इसलिए बच्चे को एक पेटी में बड़ी सावधानी के साथ बंद करके उसे गंगा की धारा में बहा दिया। बहुत आगे जाकर अधिरथ नाम के एक सारथी की नज़र उस पर पड़ी। उसने पेटी निकाली और खोलकर देखा, तो उसमें एक सुंदर बच्चा सोता हुआ मिला। अधिरथ निःसंतान था। बालक को पाकर वह बड़ा प्रसन्न हुआ। सूर्य-पुत्र कर्ण इस तरह एक सारथी के घर पलने लगा।

इधर कुंती विवाह के योग्य हुई। राजा कुंतिभोज ने उसका स्वयंवर रचा। उससे विवाह करने की इच्छा से देश-विदेश के अनेक राजकुमार स्वयंवर में आए। हस्तिनापुर के राजा पांडु भी स्वयंवर में शरीक हुए थे। कुंती ने उन्हीं के गले में वरमाला डाल दी। महाराज पांडु का कुंती से ब्याह हो गया और वह कुंती सहित हस्तिनापुर लौट आए।

उन दिनों राजवंशों में एक से अधिक ब्याह करने की प्रथा प्रचलित थी। इसी रिवाज के

© NCERT not to be republished

अनुसार पितामह भीष्म की सलाह से महाराज पांडु ने मद्रराज की कन्या माद्री से भी ब्याह कर लिया।

एक दिन महाराजा पांडु वन में शिकार खेलने गए। वहीं जंगल में हिरण के रूप में एक ऋषि-दम्पति भी विहार कर रहे थे। पांडु ने अपने तीर से हिरण को मार गिराया। उनको यह पता नहीं था कि ये ऋषि-दम्पति हैं। ऋषि ने मरते-मरते पांडु को शाप दिया। ऋषि के शाप से पांडु को बड़ा दुख हुआ, साथ ही वह अपनी भूल से खिन्न होकर नगर को लौटे और पितामह भीष्म तथा विदुर को राज्य का भार सौंपकर अपनी पत्नियों के साथ वन में चले गए और वहाँ पर ब्रह्मचारी जैसा जीवन व्यतीत करने लगे। कुंती ने देखा कि महाराज को संतान-लालसा तो है, लेकिन ऋषि के शापवश वह संतानोत्पत्ति नहीं कर सकते। अत: उसने विवाह से पूर्व दुर्वासा ऋषि से पाए वरदानों का पांडु से ज़िक्र किया।

उनके अनुरोध से कुंती और माद्री ने देवताओं के अनुग्रह से पाँच पांडवों को जन्म दिया। वन में ही पाँचों का जन्म हुआ और वहीं तपस्वियों के संग वे पलने लगे। अपनी दोनों स्त्रियों तथा बेटों के साथ महाराज पांडु कई बरस वन में रहे।

वसंत ऋतु थी। सारा वन आनंद में डूबा हुआ-सा प्रतीत हो रहा था। महाराज पांडु माद्री के साथ प्रकृति की इस उद्गारमय सुषमा को निहार रहे थे। ऋषि के शाप का असर हो गया। तत्काल उनकी मृत्यु हो गई। माद्री के दुख का पार न रहा। पति की मृत्यु का वह कारण बनी, यह सोचकर पांडु के साथ ही वह भी मर गई।

इस दुर्घटना से कुंती और पाँचों पांडवों के शोक की सीमा न रही। पर वन के ऋषि-मुनियों ने बहुत समझा-बुझाकर उनको शांत किया और उन्हें हस्तिनापुर ले जाकर पितामह भीष्म के सुपुर्द किया। युधिष्ठिर की उम्र उस समय सोलह वर्ष की थी।

हस्तिनापुर के लोगों ने जब ऋषियों से सुना कि वन में पांडु की मृत्यु हो गई है, तो उनके शोक की सीमा न रही। पोते की मृत्यु पर शोक करती हुई सत्यवती अपनी दोनों विधवा पुत्रवधुओं–अंबिका और अंबालिका को साथ लेकर वन में चली गई। तीनों वृद्धाएँ कुछ दिन तपस्या करती रहीं और बाद में स्वर्ग सिधार गईं। अपने कुल में जो छल-प्रपंच तथा अन्याय होने वाले थे, उन्हें न देखना ही संभवत: उन्होंने उचित समझा।

© NCERT not to be republished